मज़दूर, लेबर कोड्स का विरोध क्यों कर रहे हैं (3)?

'सामाजिक सुरक्षा'

सत्यवीर सिंह

अगस्त 2019 में 'वेतन कोड' का क़ानून बन जाने के बाद, बाक़ी तीन कोड्स को संसद की स्थाई समिति को सोंप दिया गया था. संसद की सभी समितियां, बिलकुल वही रिपोर्ट प्रस्तुत करती हैं, जो मोदी सरकार चाहती है. 'संसद' अपनी जगह मौजूद है, बल्कि अब और भव्य, आलीशान बन गई है लेकिन संसदीय मान्यताओं के लिहाज़ से वह खोखली हो चुकी है, अर्थहीन हो चुकी है. सत्ताधारी दल का औज़ार बन चुकी है. सत्ता का चरित्र फासीवादी हो जाने पर यही होता है. हिटलर, जर्मन संसद राईस्टाग को अपने औज़ार के रूप में तब्दील नहीं कर पाया था, वह उसके रास्ते का रोड़ा बन रही थी, इसीलिए उसने उसे, 27 फरवरी 1933 को फूंक डाला था और उसके लिए कम्युनिस्टों को ज़िम्मेदार ठहराया था. यहाँ ऐसी नौबत नहीं आएगी, ये ज़ाहिर हो चूका है. जिन 3 लेबर कोड्स, 'औद्योगिक सम्बन्ध', 'सामाजिक सुरक्षा' तथा 'व्यवसायिक सुरक्षा, स्वास्थ्य एवं काम करने की स्थिति', को, ये जांचने-परखने के लिए संसदीय समिति को सोंपा गया था, कि कहीं ये बदलाव मज़दूर विरोधी तो नहीं हैं, उन्हें और ज्यादा मालिक-परस्त और मज़दूर-विरोधी स्वरूप में, सितम्बर 2020 में संसद ने पास किया.

मज़दूरों को आज तक कोई भी अधिकार खैरात में नहीं मिला. जो मिला है, वह, अक्षरस: खून-पसीना बहाकर ही मिला है. सदियों के संघर्षों की बदौलत, मज़दूरों ने, काम करने के दौरान और सेवा निवृत्त हो जाने के बाद, अपनी सामाजिक सुरक्षा के लिए अनेक अधिकार हांसिल किए थे. ऐसे 9 अधिकारों को, मोदी सरकार द्वारा एक झटके में रद्द कर दिया गया और उनकी जगह 'सामाजिक सुरक्षा कोड' का झुनझुना थमा दिया गया.

रद्द किए गए 9 क़ानून ये हैं- कर्मचारी मुआवज़ा क़ानून, 1923; कर्मचारी राज्य बीमा कानून, 1948; कर्मचारी भविष्यनिधि एवं अन्य प्रावधान क़ानून, 1952; रोज़गार लेन-देन (रिक्तियों की अनिवार्य सूचना) कानून, 1959; मातृत्व लाभ कानून, 1961; ग्रेच्युटी भुगतान कानून, 1972; फिल्म कर्मचारी कल्याण कोष कानून, 1981; भवन एवं अन्य निर्माण मज़दूर कल्याण निधि कानून, 1996 तथा असंगठित मज़दूर सामाजिक सुरक्षा कानून, 2008.

मोदी सरकार का चरित्र देश के लोगों को इतना स्पष्ट समझ आ गया है, कि जब सरकार कहती है कि मज़दूरों के 9 कानूनों को रद्द कर उन्हें 1 'सामाजिक सुरक्षा कोड' में समायोजित करने का उद्देश्य 'संगठित और असंगठित दोनों क्षेत्रों के मज़दूरों का सशक्तिकरण' है, तब, कोई हैरान नहीं होता. देश अच्छी तरह जान चुका है, कि मोदी जी के 'सशक्तिकरण' का क्या मतलब होता है? जिस समुदाय के सशक्तिकरण की घोषणा मोदी सरकार करती है, वह समुदाय ही दहशत में आ जाता है. पहले किसानों के 'सशक्तिकरण' के लिए, ऐसे 3 कृषि बिल लाए, कि

सारे देश के किसान बिलबिला उठे. लट्ठ लेकर दिल्ली की दिशा में बढ़ लिए. सारे देश के किसान इकट्ठे होकर 13 महीने तक दिल्ली की छाती पर बैठे रहे, तब कहीं जाकर 'सशक्तिकरण' से पिंड छूटा!! बड़ी मुश्किल से गले से फंदा निकलने का अहसास हुआ, हालाँकि, मोदी सरकार भी काइयां हैं, फंदे में थोड़ी सी ढील मात्र दी गई थी, अब फंदा फिर से कसने लगा है. 15 अगस्त को लाल किले की प्राचीर से, छींट की रंगबिरंगी पगड़ी पहनकर, जब मोदी जी महिलाओं के सशक्तिकरण पर, बुलंद आवाज़ में भाषण ठोक रहे थे, ठीक उसी वक़्त उनके 'सह- योद्धा' गृह मंत्री गुजरात में, सी बी आई और अदालत के विरोध के बावजूद, बिलकिस बानो के बलात्कारियों, हत्यारों को जेल से छुड़ाने का उपक्रम कर, बलात्कारियों-हत्यारों का सशक्तिकरण कर रहे थे. मोदी जी के 'सशक्तिकरण' से देश के मज़दूरों के दहशत में आने की ठोस वज़ह मौजूद हैं, जो संक्षेप में इस तरह हैं.

1) मज़दूरों के 9 कानून रद्द कर, सामाजिक सुरक्षा कोड और बाक़ी 3 कोड लाने को मोदी सरकार ने यह कहकर उचित ठहराया था कि द्वितीय श्रम आयोग (2002) ने ऐसी सिफारिशें की हैं. सरकार ने इस आयोग की भी कुछ सिफारिशें जो मज़दूरों के हित में जाती थीं, उनको नहीं माना. आयोग की सिफारिश थी कि सामाजिक सुरक्षा के नाम पर सरकार जो भी सुविधाएँ दे, वे सभी मज़दूरों, मतलब संगठित-असंगठित क्षेत्र दोनों और सभी व्यवसायिक प्रतिष्ठानों पर लागू हों. ये सिफारिश मोदी सरकार को पसंद नहीं आई और 20 से कम मज़दूरों को मज़दूरी पर रखने वाले उद्योगों को इससे छूट दी हुई है और पी एफ, ई एस आई सी, पेंसन आदि के मामले में निर्णय लेने के लिए 'राज्य सामाजिक सुरक्षा बोर्ड' और 'राष्ट्रीय सामाजिक सुरक्षा बोर्ड' को निर्णय लेने की छूट दी गई है.

इन बोर्ड्स में मालिकों और राज्य सरकार के प्रतिनिधियों की ही चलती है और मज़दूरों को सामाजिक सुरक्षा देने के नाम पर महज़ लफ्फाज़ी ही होती है क्योंकि उनकी कोई भी योजना मालिकों पर बंधनकारी नहीं होती, लागू ना करने वाले व्यवसायिक प्रतिष्ठान पर किसी दंड का प्रावधान नहीं होता. यही वज़ह है कि कर्मचारियों के वेतन से पी एफ की कटौती कर उसे भविष्यनिधि कोष में जमा ना करने वाली कंपनियों की संख्या बढ़ती जा रही है. मोदी सरकार पहले ही श्रम कानून, जिनमें पी एफ आदि की कटौती शामिल है, लागू करने वाले इदारों को मालिक की अनुमति के बगैर निरिक्षण ना करने की हिदायतें दे चुकी है और मालिकों को कोई भी श्रम क़ानून लागू करने का दबाव नहीं रहता.

2) 'निर्माण उद्योग' तो मज़दूरों की कत्लगाह बनता जा रहा है. 2019 में छपी एक रिपोर्ट के अनुसार, भारत में निर्माण उद्योग में हर रोज़ औसत 38 मज़दूर काम करते हुए मारे जाते हैं. निर्माण उद्योग में गगनचुम्बी इमारतों में काम करते वक़्त कौन मज़दूर किस वक़्त शहतूत बन जाए कोई नहीं जानता. ईरान के निर्माण मज़दूर शायर साबिर हक़ा की ये पंक्तियाँ इस क्रूर हक़ीक़त को उजागर करती हैं.

शहतूत

क्या आपने कभी शहतूत देखा है,
जहां गिरता है, उतनी ज़मीन पर
उसके लाल रस का धब्बा पड़ जाता है.
गिरने से ज़्यादा पीड़ादायी कुछ नहीं.
मैंने कितने मज़दूरों को देखा है
इमारतों से गिरते हुए,
गिरकर शहतूत बन जाते हुए

सबीर हका, ईरान के निर्माण मज़दूर निर्माण मज़दूर असंगठित क्षेत्र के मज़दूर होते हैं. इनकी मौत पर इन्हें कुछ भी मुआवज़ा नहीं मिलता.

कितनी ही मौतें तो रिपोर्ट भी नहीं होतीं. 'भवन एवं अन्य निर्माण मज़दूर कल्याण निधि कानून, 1996' जब था, अभी भी है, लेकिन पूरी तरह लागू नहीं होता, फिर भी कितने ही निर्माण मज़दूरों को आर्थिक सहायता मिल जाती है. ज़रूरत थी इस क़ानून को मज़बूत बनाने की, जिससे बड़े-बड़े बिल्डरों को भी अपनी निर्माण परियोजना का निर्धारित 1.5 प्रतिशत पैसा, निर्माण मज़दूर कल्याण कोष में जमा करना पड़े और बे-सहारा हुए मज़दूर परिवार को मुआवज़ा मिले. मोदी सरकार ने वह कानून ही निरस्त कर दिया है. अब 'राज्य सामाजिक सुरक्षा कल्याण बोर्ड' इस सम्बन्ध में कोई भी खर्च नहीं करने वाले. कानून के रहते उसका पालन नहीं हुआ, कराने की कोई कोशिश सरकार की और से नहीं हुई, अब नहीं रहने पर तो महज लफ्फाज़ी ही मज़दूरों के हिस्से आएगी.

3) व्यापर में तकनीकी विकास के साथ-साथ, ऐसे मज़दूरों की तादाद बढ़ती जा रही है जो खुद किसी ऑनलाइन प्लेटफार्म जैसे स्विगी, मोज़ेटो, पिज़्ज़ा-बर्गर पहुँचाने वाली कंपनी के लिए काम करते हैं. इन फ्रीलांसर मज़दूरों को 'गिग वर्कर' कहा जाता है.

'गिग' वास्तव में, पश्चिमी देशों में प्रचलित बोलचाल का शब्द है, जिसका मतलब होता है, ऐसा काम जो छोटे से, निश्चित वक़्त में पूरा हो जाए. शुरू में ये शब्द, उन संगीत कलाकारों के लिए इस्तेमाल किया जाता था, जो किसी संगीत कार्यक्रम में कोई वाद्य बजाने के लिए मज़दूरी पर लिए जाते थे. तरह-तरह की यूनिफ़ॉर्म पहने ये मज़दूर, आज इधर से उधर दौड़ते नज़र पड़ते हैं. ये खुद किसी कंपनी से जुड़ते हैं तथा इनकी कोई कानून संवत निर्धारित सेवा शर्तें नहीं होतीं. ना काम के घंटे तय होते हैं और ना मज़दूरी. इस समुदाय के लिए किसी भी प्रकार की सामाजिक सुरक्षा की गारंटी 'सामाजिक सुरक्षा कोड' नहीं देती. गिग वर्कर सबसे ज्यादा शोषित मज़दूरों का एक समूह है.

4) अकेले केंद्र सरकार ही नहीं, बल्कि सभी राज्य सरकारों ने भी आजकल स्थाई रोज़गार देने बंद कर दिए हैं, क्योंकि सरकारें, मज़दूरों के सेवानिवृत्त होने पर किसी भी खर्च से, किसी भी ज़िम्मेदारी से पल्ला झाड़ लेना चाहती है. ऐसा इसलिए, क्योंकि सब कुछ चंद इजारेदार कॉर्पोरेट को अर्पित करना है. कॉर्पोरेट ज़मात को जितना मिलता जाता है, उनका हलक उतना ही ज्यादा फैलता जाता है. अस्थाई, तात्कालिक, ठेका आदि पद्धतियों से काम देकर, मज़दूरों के खून का आखिरी क़तरा भी निचोड़ लेना तो पहले से ज़ारी था ही, इन श्रम संहिताओं ने मज़दूरों की एक नई श्रेणी और बना दी है;

'नियत कालीन' मज़दूर. मतलब भरती होते वक़्त ही मालूम होगा, की 3 या 4 साल के बाद नोकरी छूट जानी है. सेना में 'अग्निवीर', बैंकों में 'अर्थवीर', रेलवे में 'रेलवीर' के नाम पर लगभग सभी नियुक्तियां 5 साल से कम अवधि के लिए ही किया जाना, सरकार ने तय कर लिया है, जिससे ग्रेचुटी का क़ानून लागू ही ना हो. ग्रेचुटी के मामले में सामाजिक सुरक्षा कोड ने स्पष्ट व्याख्या नहीं की है, जबकि शीर्षक है कि ग्रेचुटी के लिए आवश्यक 5 साल की सेवा सीमा की शर्त अब नहीं रहेगी. ऐसा अन्जाने में, मासूमियत से नहीं होता. श्रम क़ानूनों को निष्प्रभावी बनाने की सहूलियत नियम-कानून के तहत ही उपलब्ध रहती है. जहाँ सब कुछ स्पष्ट है, वे क़ानून भी लागू नहीं हो रहे, तब अस्पष्ट

व्याख्या वाले क्या लागू होंगे!!

5) सामाजिक सुरक्षा कोड के तहत, किसी भी सुविधा को प्राप्त करने के लिए हर मज़दूर का चाहे वह असंगठित क्षेत्र का ही क्यों ना हो, आधार कार्ड लिंक होना आवश्यक है. ये प्रावधान, सुप्रीम कोर्ट के फैसले का उल्लंघन है. 'पुत्तुस्वामी मामले' में सुप्रीम कोर्ट का फैसला स्पष्ट है; आधार कार्ड को सिर्फ वहीं आवश्यक घोषित किया जा सकता है, जहाँ सरकार, मज़दूरों के लिए कोई अनुदान, कोई खैरात या रेवड़ियाँ बाँट रही हो. जहाँ मज़दूर अपने हक़ का पैसा मांग रहा हो, खुद के श्रम से अर्जित जमा किया हुआ अथवा उसका कानूनी हक़दार होने का पैसा मांग रहा हो, वहां आधार कार्ड से लिंक होने अथवा आधार कार्ड जमा करने की शर्त नहीं लगाई जा सकती. हालाँकि, केंद्र सरकार द्वारा सुप्रीम कोर्ट के आदेशों का सम्मान करने का ज़माना अब बचा कहाँ है? सरकार को जो चाहिए वह आदेश सुप्रीम कोर्ट से ले सकती है.

6) मौजूदा कानूनों के तहत हर प्रतिष्ठान अपना निजी भविष्यनिधि ट्रस्ट रख सकता था, जो अब वही रख पाएगा, जहाँ कर्मचारियों की कुल तादाद 100 या अधिक हो. जो विदेशी नागरिक, हमारे देश में नोकरी करना चाहता है, और वह खुद को यहाँ का निवासी (resident) घोषित करता है, उसे भी अपना भारतीय आधार कार्ड जमा करना होगा. जो विदेशी नागरिक पिछले 12 महीने में 182 या उससे अधिक दिन भारत में रहा हो वह, 'आधार कार्ड क़ानून 2016' के तहत आधार कार्ड पाने का हक़दार हो जाता है.

मज़दूरों को अपने अधिकारों को किसी भी हालत में लुटने नहीं देना है. ज़मीनी हक़ीक़त, हालाँकि, कितनी भयानक है, इसका अंदाज़ फरीदाबाद में, लखानी मज़दूरों के वेतन से भविष्यनिधि की कटौती कर, उसे भविष्यनिधि कोष में जमा ना करने के अन्याय के विरुद्ध आन्दोलन के दरम्यान हुआ. ये ऐसा घोर अन्याय है जिस पर भविष्यनिधि विभाग को आग-बबूला हो जाना चाहिए था लेकिन ऐसा नहीं हुआ. पी एफ में ऐसा फर्जीवाडा करना तो लेबर कोड्स के लागू होने के बाद भी अपराध ही है.

भारतीय दंड संहिता के अनुसार, मालिकों की यह हिमाक़त, फ़िरौती का अपराध कहलाएगी. ऐसी खुली लूट पर भी, जिसे रोकने की ज़िम्मेदारी निभाने की यह विभाग तनख्वाह ले रहा है, भविष्यनिधि विभाग, बिलकुल सहज नज़र आया तो इसे गहराई में जानने की इच्छा हुई. जो मालूम पड़ा वह आँखें खोल देने वाला है.

भविष्यनिधि विभाग के एक अधिकारी ने नाम ना छापने की शर्त पर जानकारी दी, कि 2014 में मोदी सरकार के आने के बाद हर विभाग को ऐसी अलिखित हिदायतें प्राप्त हुईं हैं, कि मालिक कारखाने में कुछ भी कर रहा हो, कोई भी इंस्पेक्टर जाँच-पड़ताल करने नहीं जाएगा. पहले उसे, अपने निरिक्षण की अपने विभाग से लिखित अनुमति लेनी होगी, उसके बाद, सम्बंधित व्यवसायिक प्रतिष्ठान को अपने निरिक्षण की ऑनलाइन सूचना भेजनी होगी. इसका मतलब सीधा-सीधा ये हुआ कि जो चोरी कर रहा है, उसकी जाँच करने के लिए उसी से अनुमति लेनी होगी!! मोदी जी का यही 'गुजरात मॉडल' तो सरमाएदारों की ख़ास पसंद है. कितनी चालाकी से मौजूदा 44 लेबर कानून ही नहीं, बल्कि कानून बन चुके लेकिन लागू होने का इंतज़ार कर रहे लेबर कोड्स भी एक छलावा ही है. निरिक्षण विभाग में निरीक्षक ही भर्ती ना करना, उसे पंगू बना देना, 'गुजरात मॉडल' का दूसरा पहलू है. वही 'गुजरात मॉडल' अब 'भारत मॉडल' बन चुका है.

ऐसे हालात में भी मज़दूरों को अपने अधिकारों को बचाना इसलिए अआवश्यक है, कि कानून हैं और लागू नहीं हो रहे, ऐसी स्थिति में मज़दूर लड़ तो पाएँगे. कानून ही नहीं रहेंगे तो कैसे लड़ेंगे. मज़दूरों के सामने चुनौती ज़बरदस्त है लेकिन मज़दूरों के जीवन में चुनौतियाँ कब नहीं रहीं? मज़दूर चुनौतियों से दो-चार होना जानते हैं.

मज़दूर अपने सशक्तिकरण की जंग खुद लड़ेंगे और जीतेंगे जैसे नवम्बर 1917 में रूस के मज़दूर जीते थे. कार्ल मार्क्स ने कितना सही कहा है, "मज़दूरों को अपनी मुक्ति की जंग खुद जीतनी होती है." मज़दूर अधिकार संघर्ष अभियान, मासा, द्वारा आगामी 13 नवम्बर को राष्ट्रपति भवन चलो का आह्वान किया गया है. वक़्त की पुकार है कि मज़दूर इस तहरीक़ को क़ामयाब बनाएं. लेबर कोड और ठेका प्रथा रद्द कराने के साथ, अपने असली सशक्तिकरण के संघर्ष को अंजाम तक पहुंचाएं.